तृतीय अध्याय

मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

मनोविश्लेषण

फ्रायड का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त

अचेतन

अवरोध और दमन

शैशव कामुकता

लिबिडो

इडिपस मनोग्रन्थि

प्रवृत्तियों का ध्रुवीकरण

इदं अहं और पराहं

एल्फ्रेड एडलर का वैयक्तिक मनोविज्ञान

कार्ल गस्टैव युंग का सिद्धान्त

हिन्दी उपन्यासों पर प्रभाव

हिन्दी उपन्यास साहित्य में मनोविज्ञान का प्रवेश

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

तृतीय अध्याय

मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास

विभिन्न कालों में हिन्दी उपन्यासों की शिल्पविधि के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यासों की शिल्पविधि में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। सामाजिक, ऐतिहासिक एवं राजनीतिक उपन्यासों की मूल प्रवृत्ति मानव जीवन के बहिर्जगत की विभिन्न समस्याओं के उद्‌घाटन में रही। यद्यपि इनमें उपन्यास शिल्प में निरन्तर परिष्कार होता रहा, लेकिन इसके विकास की दिशा एक जैसी ही रही। प्रेमचन्दोत्तर युग में उपन्यासकारों ने मनोविज्ञान का प्रयोग कर हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि को एक नई दिशा प्रदान की। इन उपन्यासों में मानव के बहिर्जगत के स्थान पर अन्तर्जगत का चित्रण किया जाने लगा। इन उपन्यासों में व्यक्ति के आन्तरिक तथ्यों का विश्लेषण, आन्तरिक कुण्ठाओं के सूक्ष्म निरीक्षण तथा मानसिक घात–प्रतिघातों का चित्रण किया जाने लगा। इसी क्रम में मनोविश्लेषण प्रधान उपन्यासों की रचना होने लगी। हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि को नवीन दिशा देने में दार्शनिक चिंतन का महत्त्वपूर्ण हाथ है। इनमें फ्रायड, एडलर व युंग के मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्ति ने हिन्दी उपन्यासों को अत्यधिक प्रभावित किया। इन्हीं की विचारधारा के प्रभाव से हिन्दी में मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों की रचना होने लगी।

मानव मन अत्यन्त चंचल और गतिशील है। इसी गतिशीलता के कारण मनुष्य का मन प्रत्येक वस्तु की सही जाँच–पड़ताल करना चाहता है। इसी क्रम में वह मानव के विभिन्न क्रिया–कलापों का अध्ययन कर उसकी समस्त समस्याओं को समझता है और यथा–सम्भव दूर करने का प्रयत्न करता है। "इस प्रकार मानव के प्रति मानव की चिंता को समझने, समझाने, देखने, बूझने के प्रयत्न को मनोविज्ञान (Psychology) का अध्ययन कहते हैं।"[1]

---

1 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 40

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

मनोविज्ञान शब्द दो यूनानी शब्दों से मिलकर बना है– (Psyche) (साइके) और (logos) (लोगास)। साइके शब्द का अर्थ है Mind or self तथा लोगास शब्द का अर्थ है discourse; अर्थात मनोविज्ञान शब्द का अर्थ 'आत्मा का दर्शन'[1] था, लेकिन धीरे–धीरे 'साइके' शब्द का अनुवाद मन के रूप में होने लगा और मनोविज्ञान मन का (Science of mind) अध्ययन हो गया।

मनोविज्ञान का अध्ययन प्रारम्भ से ही किसी न किसी रूप में होता रहा है। "उपनिषदों में, सांख्य दर्शन में, योग दर्शन में, न्याय दर्शन में तथा बौद्ध दर्शन की अनेक शाखाओं में मानव मन सम्बन्धी अनेक बातें उपलब्ध हो सकती हैं।"[2] आधुनिक समय में मनोविज्ञान में मन और उसकी शक्तियों का वैज्ञानिक अध्ययन प्रारम्भ हो चुका है। अन्य विज्ञानों की तरह मनोविज्ञान में भी प्रयोगशाला में प्रयोग होने लगे हैं। फलस्वरूप मनोविज्ञान में भी विभिन्न मतों के कारण अनेक मनोवैज्ञानिक सम्प्रदाय पैदा हो गये हैं। इन सम्प्रदायों में मनोविश्लेषण सम्प्रदाय (Psycho-analysis) ने वर्तमान उपन्यास साहित्य को अत्यधिक प्रभावित किया है। यहाँ पर हम मनोविश्लेषण सम्प्रदाय का अध्ययन करेंगे।

मनोविश्लेषण : मनोविश्लेषण की एक विचारधारा जो मानव व्यवहार को जानने का माध्यम है, मनोविश्लेषण कहलाता है। "मनोविश्लेषण मस्तिष्क के चेतन, उपचेतन और अचेतन तीन भागों में से अचेतन को अधिक महत्त्व प्रदान करता है।"[3] मनोविश्लेषण में बाल्यकालीन अनुभवों का मानव के अवचेतन मन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। "मनोविश्लेषणात्मक पद्धति के अनुसार व्यक्ति का असंतोष, उसकी पीड़ाएँ, निराशा आदि कुण्ठाजन्य परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होती हैं। ये कुण्ठाएँ व्यक्ति के अचेतन में संगृहीत रहती हैं और मानव जीवन को संचालित करती हैं। यह चेतन मन (conscious)

---

1 'दर्शनशास्त्र का इतिहास' : डॉ. देवराज उपाध्याय और डॉ. रामानन्द तिवारी, पृष्ठ – 88

2 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 41

3 'हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा' : डॉ. रामदरश मिश्र, पृष्ठ – 80

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होता है, मनुष्य इसलिए इसके हाथों में अवश सा जीवन में गतिशील होता है। मनुष्य के आन्तरिक जगत् का अध्ययन ही साहित्य में मनोविश्लेषणवाद कहलाया।"[1]

इस प्रकार मनोविश्लेषण मानव मन के असामान्य व्यवहार के कारणों की खोज करता है। मानव मन के अध्ययन का यह एक महत्त्वपूर्ण विज्ञान है। उपन्यासकार मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों के माध्यम से औपन्यासिक चरित्रों के अवचेतन मन की विभिन्न प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन करता है। मनोविश्लेषण मुख्य रूप से फ्रायड के सिद्धान्तों से सम्बन्धित है। फ्रायड ने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर उन्हें 'मनोविश्लेषण' नाम दिया। एडलर का 'वैयक्तिक मनोविज्ञान' और युंग का 'विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान' फ्रायड के सिद्धान्तों का ही परिवर्तित, परिवर्धित रूप है।

फ्रायड का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त : फ्रायड का जन्म 1856 ई0 में मोर्विया में हुआ था, लेकिन वे चार वर्ष से मृत्यु पर्यन्त वियेना में रहे। बाल्यकाल से ही परिश्रमी व मेधावी फ्रायड वियेना विश्वविद्यालय में चिकित्सा के छात्र रहे। मनोचिकित्सा में उनकी गहरी रूचि थी। सन् 1885 में पेरिस में जाकर फ्रायड ने शार्को के साथ एक वर्ष तक अध्ययन किया। उन्होंने वहाँ जाना कि हिस्टीरिया के इलाज में सम्मोहन सहायक होता है और हिस्टीरिया केवल स्त्रियों को ही नहीं बल्कि पुरूषों में भी पाया जाता है। वियेना में फ्रायड स्नावयिक रोगों के विशेषज्ञ ब्रुअर से अत्यधिक प्रभावित हुए। दोनों ने मिलकर खोज निकाला कि हिस्टीरिया के लक्षणों का रेचन विधि (Catharsis) द्वारा सफलतापूर्वक इलाज किया जा सकता है। लेकिन यह इलाज स्थायी नहीं होता था। इसके पश्चात् फ्रायड ने सम्मोहन के स्थान पर स्वतंत्र साहचर्य (Free association) नामक विधि का प्रयोग किया। इसमें फ्रायड ने अपने रोगियों से कहा कि वह अपने मन और शरीर को विश्राम देकर विचारों को बिना बाधा सुगमता से चलने दें। स्वतंत्र

---

1 'उपन्यास शिल्प और प्रवृत्तियाँ' : डॉ. सुरेश सिनहा, पृष्ठ – 206

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

साहचर्य द्वारा जो अनुभव, अभिव्यक्तियाँ व इच्छाएँ जानने में आती हैं। वे प्रायः लैंगिक होती हैं। स्वप्न विश्लेषण में फ्रायड ने बताया कि मनोविश्लेषक रोगी के अन्दर छिपी हुई ग्रन्थियों को जान सकता है।

मनोविश्लेषण के कार्य के लिए फ्रायड ने दो बातों की ओर अधिक ध्यान दिया– मनस्तापी व्यक्तियों की चिकित्सा के लिए क्रियात्मक विधि की आवश्यकता तथा मानव की वास्तविकताओं की खोज के लिए अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने का प्रयत्न। उन्होंने मनोवैज्ञानिक रोगियों से प्राप्त अनुभवों को मनोविज्ञान के क्षेत्र में क्रियान्वित किया। उनका यह कार्य 'मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बाद में फ्रायड ने अपने नवीन अवलोकनों के आधार पर पुराने विचारों को थोड़ा परिवर्तित किया। फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के प्रमुख तत्व इस प्रकार है–

अवचेतन (Unconscious) : फ्रायड ने अपने सम्मोहन सम्बन्धी प्रयोगों में पाया कि व्यक्ति को अनेक प्रकार के विभ्रम (Hallacination) करायें जाने के बाद जब वे सम्मोहित अवस्था से उठते थे तो उन्हें सम्मोहन अवस्था के किसी भी अनुभव का स्मरण नहीं रहता था। लेकिन प्रयत्न करने पर उन्हें सम्मोहित अवस्था की बातों का प्रत्यास्मरण हो जाया करता था। फ्रायड ने जाना कि व्यक्ति का कुछ मानसिक भाग ऐसा होता है, जो छिपा रहता है और उसे इसका ज्ञान नहीं होता है। "मानव मस्तिष्क का $^{3}/_{4}$ अंश इसी अचेतन की परिधि के अन्दर है और मनुष्य के विचार, उसके व्यवहार तथा रहन–सहन के ढंग की स्वाभाविकता और अस्वाभाविकता का मूल प्रेरक यही है।"[1] मानव मस्तिष्क के अन्दर अनेक प्रकार की अनुभूतियाँ विद्यमान रहती हैं, जो दमन के द्वारा अचेतन में चली जाती हैं। लेकिन प्रयत्न करने पर इन अनुभूतियों को पाया जा सकता है।

अचेतन के सम्बन्ध में फ्रायड का विश्वास था कि अचेतन मन मुख्य रूप

1 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 45

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

से प्रेरणाओं से निर्मित होता है। यद्यपि सम्मोहन के अन्दर रोगी की स्मृतियाँ निश्चित रूप से व्यक्तियों और घटनाओं से सम्बन्धित हुआ करती थी, किन्तु इन स्मृतियों के कारण उनसे उनकी छिपी हुई उत्कृष्ट अतृप्त इच्छाएँ रहती थी। बुड्सवर्थ इस सम्बन्ध में एक नवयुवती का उदाहरण देते हैं, जो अपने बीमार पिता की सेवा से प्रेरित होकर अपने प्रेमी को भूल जाती है। उसकी यह अतृप्त इच्छा उसके अचेतन मन में बड़ी सजीव रहती है और इसके कारण उसके चेतनात्मक व्यवहार पर असर पड़ने लगा। जिससे वह हिस्टीरियाग्रस्त हो गयी। इसका कारण यह था कि उस नवयुवती की इच्छा थी कि वह अपने पिता की सेवा करना छोड़ दे। फ्रायड ने बताया कि कोई भी व्यवहार बिना कारण के नहीं होता है उसका कोई न कोई कारण अवश्य होता है। मनुष्य पूर्ण रूप से किसी भी बात को नहीं भूलता है। बल्कि वह बात उसके अचेतन मन में चली जाती है। उनके अनुसार व्यक्ति को जिसका निषेध किया जाता है वह उसी को प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।"[1]

फ्रायड मानसिक नियत्ववाद को मनोविश्लेषण का आधार तत्व मानते हैं। यह इस बात का द्योतक है कि हमारे मानसिक तथ्य आकस्मिक नहीं होते। उनके पीछे कोई न कोई कारण होता है वे बिना कार्य के कारण को भी नहीं मानते हैं। फ्रायड प्रत्येक व्यवहार का प्रेरक मानते हैं। यदि व्यवहार का चेतनात्मक प्रेरक नहीं होता तो उसका अचेतनात्मक प्रेरक अवश्य होगा।

अवरोध और दमन (Supression and Repression) : व्यक्ति के चेतन प्रेरक समय–समय पर चेतना में आना चाहते हैं, किन्तु अचेतन व चेतन के बीच एक प्रहरी बैठा रहता है, जो निराशाजनक व लज्जाजनक विचारों को चेतन में जाने से रोकता है। वह उन विचारों के मार्ग में रूकावट डालता है। फ्रायड ने इन सबकी व्याख्या की। चेतन अहं प्रेरक बाहर आना चाहता है और चेतन अहं बलपूर्वक उसे रोकता है। "दमन और रोकथाम का यह व्यापार अज्ञात अवस्था में

1 "Contemporary School of Psychology" : R.S. Woodworth, Page – 155-156

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

चलता रहता है। हम अपने दैनिक जीवन में जिस तरह ज्ञान–पूर्वक कुछ विचारों पर प्रतिबन्ध लगा देते हैं, उससे यह भिन्न है और अज्ञात रूप से चलता रहता है और अज्ञात प्रतिबन्धक व्यापार के लिए दमन (Repression) शब्द का प्रयोग किया है।"[1] अपने सिद्धान्त (Theory of Repression) में फ्रायड ने बताया कि अचेतन प्रेरक का विरोध करने वाली उसी के समान दूसरी शक्ति है।

शैशव कामुकता (Infantile sexuality) : फ्रायड ने अपने काम प्रवृत्ति के सम्बन्ध में लिखे गये लेखों में बताया कि मनस्तापी रोगियों ने अपनी कामेच्छाओं को बलपूर्वक दमित कर लिया था। व्यक्ति का लैंगिक जीवन शिशुकाल से ही प्रारम्भ हो जाता है, लेकिन शैशवकाल की काम प्रवृत्ति इतनी प्रबल नहीं होती जितनी की किशोरावस्था में होती है। शिशु तीन अवयवों से सुख प्राप्त करता है– मुख से, गुदा से व जननेन्द्रिय से। जो स्वरत्यात्मक होती है। "सर्वप्रथम शिशु स्तनपान के माध्यम से मुख–सुख का आनन्द लेता है। इसको उस समय देखा जा सकता है जब स्तन से दूध नहीं आने की स्थिति में शिशु स्तन को काटने लगता है। इसके पश्चात् जब वह कुछ बड़ा हो जाता है तो वह अंतड़ी क्रियाओं से आनन्द लेता है। इस स्थिति में वह देर से शौच जाता है और इससे उत्पन्न होने वाले तीव्र संवेदना से वह सुख प्राप्त करता है। बड़ा होने पर वह अपने जननेन्द्रिय से प्रहस्तन आदि क्रियाओं से आनन्द प्राप्त करता है।"[2]

इस प्रकार फ्रायड ने शिशुकाल की तीन अवस्थाएँ मानी हैं– चूषण अवस्था, गुदावस्था व जननेन्द्रिय अवस्था। ये अवस्थाएँ 6 वर्ष तक होती हैं। अर्थात प्रत्येक अवस्था दो वर्ष की होती है। यदि बालक के अन्दर इन अवस्थाओं का विकास स्वाभाविक ढंग से होता जाता है तो बालक एक अवस्था को पार कर दूसरी अवस्था में पहुँच जाता है। लेकिन जब बालक की स्व–रति क्रिया को सामाजिक वातावरण द्वारा विफलता और प्रतिबन्ध मिलता है तो ऐसी स्थिति में

---

1 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 46

2 "Contomparary School of Psychology" : R.S. Woodworth, Page – 177-178

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

वह या तो समाज के अनुकूल अपने आप को ढाल लेता है या पहले प्रतिक्रिया स्वरूप उत्तेजित होता है और बाद में अपनी क्रिया–विशेष का दमन कर लेता है।

लिबिडो (Libido) : फ्रायड ने अपने सिद्धान्तों में दो मुख्य प्रेरकों को माना। पहला आत्मरक्षा (Self preservation) तथा दूसरा प्रजनन (Reproduction)। भूख–भय और आत्म प्रकाशन आत्मरक्षा के प्रेरक हैं। इनको फ्रायड ने अहं प्रेरक कहा। प्रजनन प्रौढ़ व्यक्ति में पायी जाने वाली तीव्र कामेच्छा है। फ्रायड ने इसी को लिबिडो (Libido) कहा।"[1] लिबिडो ही मनुष्य के मस्तिष्क तथा उसके सारे व्यक्तित्व को परिचारित करने वाली मूल शक्ति है। लिबिडो के अन्दर मनुष्य के सारे आनन्द, उत्साहपूर्ण कार्यकलाप, मिथुन व्यापार, प्रेम, घृणा आदि बातें आती हैं। यह एक मनोदैहिक प्रत्यय है, जिसका काम मूल प्रवृत्ति के शारीरिक तथा मानसिक दोनों पक्षों के अर्थ से है। लिबिडो को इड (Id) की शक्ति भी कहा जा सकता है। यह मात्रात्मक रूप से परिवर्तनशील है। फ्रायड ने लिबिडो में मानसिक पक्ष पर अधिक बल दिया है। इसका मुख्य अवयव लैंगिक प्रेम है और मुख्य लक्ष्य लैंगिक सम्बन्ध है। इस प्रत्यय में माता–पिता तथा बच्चों का प्रेम, आत्मप्रेम, मित्रता एवं मूर्त वस्तुओं से प्रेम सम्मिलित है।

लिबिडो सिद्धान्त का सामान्यीकरण फ्रायड ने 'जीवनमूल प्रवृत्ति (Eros) में किया। जीवन मूल प्रवृत्ति (Eros) के अन्तर्गत आत्म परीक्षण (Self preservation) की मूल प्रवृत्ति, प्रजाति प्रवर्धन (Propagation species) की इच्छा, आत्मप्रेम, दूसरों के लिए प्रेम और वृद्धि अपनी संभाव्यताओं को सिद्ध करने की प्रवृत्ति सम्मिलित है। इसको सर्जनात्मक बल भी कह सकते हैं। फ्रायड ने अपने रोगियों में पाया कि उनके अन्दर कभी–कभी अपने को तथा दूसरों को नष्ट करने का आवेश आता है। मनुष्य अनिवार्य रूप से मृत्यु की ओर जाता है। यदि मूल प्रवृत्ति अन्तर्मुखी हो जाती है तो वह आत्महत्या में परिणित हो जाती है

1 "Libido is quantitatively veriable force which could serve as a measure of processes and transformation occurring in the field of sexual excitation" 'The Standard Edition of the comlde Psychological works of Fread' : Strachey Jemes, Page - 257

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

और यदि वह बाहर की ओर अभिमुख होती है तो वह घृणा या हत्या का रूप धारण कर लेती है। इस प्रकार की मृत्यु मूल प्रवृत्ति को फ्रायड ने Thanotoes का नाम दिया। जीवन प्रवृत्ति (Eros) तथा मृत्यु प्रवृत्ति (Death instinct) साथ–साथ रहने के कारण विरोधी अचेतन इच्छाएँ हमें अपनी ओर खींचती हैं। इस प्रकार प्रेम एक प्रकार का जीवन मूल प्रवृत्ति तथा मृत्यु मूल प्रवृत्ति का एकरूपीकरण है। फ्रायड के अनुसार मनुष्य अपनी इच्छा अथवा कार्य में जिन वस्तुओं से प्रेम करता है, उन्हीं का विनाश करता है। बच्चे के विकास में Eros तथा Thanotoes का विस्तार परिवार के सदस्यों तथा समाज के व्यक्तियों के साथ उसके सम्बन्धों का निर्धारण करता है।

इडिपस मनोग्रन्थि (Oedipus complex) : जननेन्द्रिय अवस्था में बालक विपरीत लिंग के प्रति आकर्षित होने लगता है। इसी को इडिपस मनोग्रन्थि (Oedipus complex) कहते हैं। 4–5 वर्ष की अवस्था में लड़का अपनी माँ को प्रेम करने लगता है और लड़की अपने पिता को प्रेम करने लगती है। इस प्रकार जब लड़का अपनी माँ से लैंगिक प्यार चाहता है तो वह अपने पिता का प्रतिद्धन्दी हो जाता है और लड़की अपने पिता से प्यार को चाहने के कारण माँ की प्रतिद्धन्दी हो जाती है, लेकिन इस प्रकार की भावना समाज में निंदनीय होने के कारण इनको इसका दमन करना पड़ता है। "अतः इसके दमन से बालक में Oedipus complex और बालिका में Electra complex नामक ग्रन्थियाँ जम जाती हैं और भविष्य में जीवन व्यापार को प्रभावित करती हैं।"[1]

इडिपस ग्रन्थि पर सफलतापूर्वक विजय प्राप्त करने के पश्चात वह अभिप्रेरणात्मक विकास की दूसरी अवस्था में प्रवेश करता है। इस अवस्था को फ्रायड ने प्रसूति समय (Latancy period) की संज्ञा दी है। यह अवस्था शैशवकालीन समय से लेकर प्रौढ़ता अर्थात 10 से 12 वर्ष तक रहती है। इस अवस्था में बालक की स्वरत्यात्मक (Autoerotiasm) स्थिति में रूचि कम हो

1 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 49

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

जाती है और बालक में काम भावना का विकास होने लगता है। प्रसूति समय के पश्चात् बालक प्रौढावस्था में आता है। इस अवस्था में जननअंग लैंगिक कार्य करने योग्य हो जाते हैं। दूसरी अवस्था की स्वरति की भावना यहाँ हस्तमैथुन का रूप धारण कर लेती है, और बालक विषम लिंगी की ओर आकर्षित होता है।

शैशवकालीन अवस्था में किसी बच्चे का स्थिरीकरण (Fixation) हो सकता है। इसके पश्चात् अभिप्रेरणात्मक प्रणाली ठीक से विकसित नहीं होती है और बालक के व्यक्तित्त्व का विकास रूक जाता है। यदि बालक चूषण अवस्था में कुण्ठित हो जाता है तो वह निराशावादी, दूसरों पर निर्भर रहने वाला व याचक हो जाता है और यदि गुदावस्था में स्थिरीकरण हो जाता है तो बालक अपने अन्दर स्वच्छता, अधिकार एवं संयम का भाव विकसित कर सकता है।

प्रवृत्तियों का ध्रुवीकरण (Polarity of Motives) : इस सिद्धान्त के अनुसार फ्रायड ने बताया कि मनुष्य सदा से दो प्रवृत्तियों से परिचारित होता रहता है। एक प्रवृत्ति उसे पूर्व की ओर खींचती है और दूसरी उसे पश्चिम की ओर। उसमें स्वप्रेम की प्रवृत्ति है तो साथ ही परप्रेम भी, निर्माण की है तो विनाश की भी। उसमें जीवन की अदम्य आकांक्षा है तो मरण की भी उतनी ही है। ये दोनों विपरीत तथा परस्पर विरोधिनी प्रवृत्तियाँ उसके व्यक्तित्त्व के साथ लगी रहकर उसके जीवन के व्यापारों में प्रगटित होते रहती हैं।"[1] फ्रायड ने इन दोनों प्रवृत्तियों को अलग–अलग नाम दिया। इन प्रवृत्तियों के उद्घाटन के लिए ही फ्रायड ने जीवन प्रवृत्ति (Eros) और मरण प्रवृत्ति (Thanotoes) नामक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया।

जैसा कि फ्रायड ने बताया कि सर्वप्रथम बालक में लिबिडो उसके अन्दर ही स्थित रहता है। यह अवस्था स्वरति (Self libido) की है। इसके पश्चात् बालक अन्य वस्तुओं की ओर आकर्षित होता है तो उसका लिबिडो भी अन्य वस्तुओं पर केन्द्रित होता है और वह अपनी माँ को प्रेम करने लगता है।

---

1 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 51

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

यहाँ पर परात्मक रति (Object libido) की अवस्था उत्पन्न होती है। अर्थात पहली अवस्था का ह्रास होता है और दूसरी अवस्था का विकास होता है। फ्रायड ने इन दोनों के परस्पर द्वन्द्व के समाधान के लिए कहा कि जीवन में जन्म और मृत्यु दो सत्य हैं। मृत्यु जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। इसको टाला नहीं जा सकता है।

फ्रायड ने माना कि मनुष्य के अन्दर जितनी काम–वासना होती है उतनी ही आक्रमणकारी प्रवृत्ति भी होती है। लिबिडो के स्वकेन्द्रित अवस्था में मनुष्य अन्तर्मुखी होता है, लेकिन बाद की अवस्था में दूसरों पर लिबिडो के केन्द्रित होने पर वह बहिर्मुखी हो जाता है। उसी प्रकार उसके अन्दर की स्वमृत्यु की भावना बहिर्मुख होकर परमृत्यु की भावना का रूप धारण कर लेती है। अर्थात मरने की भावना मारने की भावना बन जाती है। यह मृत्यु प्रवृत्ति मनुष्य के अन्दर प्रतिस्पर्धा, विजय प्राप्त करने की भावना, दूसरों को तंग करने या आक्रमण करने की प्रवृत्ति आदि के रूप में सामने आती है। पर–पीड़नरति (Sadism) और स्वपीड़नरति (Masochism) भी इसी क्रिया के अन्दर आते हैं। पर–पीड़न में रति रखने वाला मनुष्य दूसरों को पीड़ा पहुँचाकर अपनी काम–वासना को सन्तुष्ट करता है। अर्थात उसका आनन्द दूसरों के दुःख पर आश्रित रहता है। अपने प्रेमी को दुःख देकर ऐसे मनुष्य को सुख मिलता है। आत्मपीड़न में रति रखने वाले मनुष्य को अपने प्रेमी से दुःख पाकर सुख मिलता है। "पहली अपने को पीड़ित करने की प्रवृत्ति है, दूसरी प्रेम के विषय को पीड़ित करने की प्रवृत्ति है।"[1]

इदं अहं और पराहं (Id, Ego and Superego) : फ्रायड ने मन के तीन भाग बताये इदं, अहं और पराहं। फ्रायड ने चेतन और अचेतन को मन के अवयव माना। चेतन स्व (Conscious Self) इन्द्रियों के द्वारा वातावरण के सम्पर्क में आकर पेशियों के द्वारा वातावरण में क्रिया करता है। यह विचार करने,

---

1 'उपन्यास शिल्प और प्रवृत्तियाँ' : डॉ. सुरेश सिनहा, पृष्ठ – 207

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

स्मरण करने, प्रत्यक्षीकरण करने और क्रिया करने में लगा रहता है। अचेतन मन निरन्तर चेतन में आने की कोशिश करता है, लेकिन चेतन अहं उसे रोक देता है। यह उन्हें परिमार्जित तथा परिशोधित कर ही क्रियाशील होने की अनुमति देता है। चेतन स्व को फ्रायड ने अहं (Ego) कहा। जिसका कार्य अचेतन का प्रतिरोध करना है। फ्रायड ने देखा कि जिन रोगियों का विश्लेषण किया जाता है उन रोगियों को अपने विचारों के प्रतिरोध का ध्यान नहीं रहता। वे चेतनात्मक रूप में अपने कुछ अनुभवों का पुनः स्मरण करते थे। किन्तु अचेतनात्मक रूप में उनका प्रतिरोध भी करते थे। अतः अहं प्रतिरोधी के रूप में कार्य करने के साथ–साथ अचेतन रूप में भी कार्य करता था। फ्रायड ने माना कि इसको आंशिक रूप से चेतन होना चाहिए और आंशिक रूप से अचेतन होना चाहिए। मन के आन्तरिक भाग को फ्रायड ने इदं (Id) कहना आरम्भ कर दिया। यह मस्तिष्क का वह प्रदेश है, जहाँ मनुष्य की सारी उमंगें, प्रेरणायें और इच्छाऐं रहती हैं। किन्तु इनमें कोई व्यवस्था नहीं होती और ये बाहर आने का रास्ता खोजती हैं। इन्हें बाहर आने के लिए Ego से होकर जाना पड़ता है। अहं प्रारम्भ में इदं को बाहर आने से रोकता है, क्योंकि वह अविकसित होता है। लेकिन जब वह अनुभव के द्वारा सीख जाता है तब उसे इदं को प्रतिबन्धित करने की आवश्यकता होती है। यह इदं से मूल प्रवृत्तियों को ग्रहण कर उन्हें वास्तविक नियम के अनुरूप कर देता है। किन्तु जब अहं इदं की इच्छा कर दमन करता है तब यह दमित इच्छा और उससे सम्बन्धित अनुभव व वस्तुएँ अन्दर चली जाती हैं और इदं से जुड़ जाती हैं। परिणामस्वरूप इदं पहले से भी अधिक दुखदायी हो जाता है। जब इदं इतना बलवान होता है कि इच्छा पर विजय पा सके, तब अहं अपना उचित कार्य करता है।

मन का तृतीय अवयव पराहं (Super ego) भी बाल्यावस्था में ही उत्पन्न हो जाता है। प्रारम्भ में बालक के माता–पिता उसे छोटी–छोटी बातों के लिए डाँटते हैं, जो बच्चे के अन्दर न्यूनता की भावना लाते हैं। बच्चा अपने माता–पिता को अपना प्रतिरूप मान लेता है। वह उनकी प्रशंसा ही नहीं करता

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

वरन् उनसे डरता भी है। माता–पिता अपने बच्चे को दण्ड भी देते हैं। बालक अपने माता–पिता के नैतिकता के नियमों का पालन भी करता है। परिणामस्वरूप बालक बाहरी आदेशों को अपने आचरण के आन्तरिक नियम मान लेता है। वह अपनी माता–पिता की अवज्ञा नहीं करना चाहता। इस प्रकार अहं दो भागों में विभक्त हो जाता है– पहला कर्ता और दूसरा नैतिक आलोचक। कार्य करने वाला अहं वास्तविक अहं होता है, जबकि पहरेदारी करने वाला नैतिक आलोचक बन जाता है। उसी को फ्रायड ने पराहं (Super ego) कहा। इस प्रकार Ego को तीन स्वामियों की सेवा करनी पड़ती है। बाह्य संसार, अहं भाव (Id) तथा नैतिक अहं (Super ego)। जब वह कभी इस समन्वय स्थापना की क्रिया में असमर्थ हो जाता है और भार वहन में असफल हो जाता है, उसी स्थान पर चिंता का शिकार बनकर तीनों के प्रति प्रतिक्रिया करता है।

इस प्रकार फ्रायड के सिद्धान्तों के अनुसार मनुष्य के व्यक्तित्त्व का महत्त्वपूर्ण अंश अचेतन है। अचेतन के अन्दर विभिन्न प्रकार की दुर्दमनीय, असभ्य, क्रूर, स्वार्थ परायण, अनगढ़, स्वतृप्तिकामी आदि प्रवृत्तियाँ स्थित होती हैं। चेतन अहं इन विद्रोही प्रवृत्तियों को दमन करने का प्रयास करता है। वह मनुष्य के व्यक्तित्व को परिवर्तित करती रहती है और उसके चरित्र का निर्माण करती है।

एल्फ्रेड एडलर का वैयक्तिक मनोविज्ञान : एडलर ने वैयक्तिक मनोविज्ञान (Individual Psychology) नामक मनोवैज्ञानिक सम्प्रदाय की स्थापना की। इन्होंने अपने वैयक्तिक मनोविश्लेषण में व्यक्तिगत भेदों को महत्त्व प्रदान किया है। "फ्रायड द्वारा प्रतिपादित अचेतन दमन तथा व्यक्ति में कामभाव के विकास से इतिहास पर उसकी विशेष आस्था नहीं है।"[1] वे फ्रायड के लिबिडो (Libido) सिद्धान्त से सहमत नहीं होते। उन्होंने उत्कृष्टता और प्रभुत्व को मुख्य प्रेरक–शक्ति माना है।

---

1 'आधुनिक कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 59

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

फ्रायड ने जहाँ शैशव कामुकता (Infantile sexuality) को बहुत महत्व दिया है वहीं एडलर के अनुसार यह शिशु के व्यवहार की क्लिष्ट व्याख्या है। शिशु अपने चारों ओर के वातावरण में अपने आप को हीन और कमजोर पाता है और वह इस हीन भावना के साथ संघर्ष करके आगे बढ़ने का प्रयास करता है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति जो अपने को हीन समझता है वह उस हीन भावना से निकलकर उत्कर्ष की ओर जाना चाहता है। वह हीन भावना की पूर्ति करने का प्रयत्न करता है और उत्कृष्ट बनने का प्रयास करता है। "इस प्रकार शिशु अपनी हीन–भावना की क्षतिपूर्ति के लिए जिन मार्गों को ग्रहण करता है वे उसके लक्ष्य का निश्चय करते हैं और जो उसके वयस्क जीवन के समस्त व्यापारों को निर्देश करते हैं।"[1]

प्रवृत्तियों के ध्रुवीकरण में भी एडलर पूर्ण विश्वास रखते हैं। उनके अनुसार बच्चे के अन्दर प्रेम और मित्रता से अनुक्रिया करने की जन्मजात क्षमता होती है। बच्चे की माँ यदि प्रारम्भिक वर्षों में बच्चे को सन्तुष्ट कर देती है, जिससे कि बच्चा उसके ऊपर शासन करने लगे अथवा माता बच्चों पर इतना प्रभाव स्थापित करें कि बच्चों की स्वतंत्रत भावना समाप्त हो जाय तो इन दोनों ही स्थितियों में एडलर ने माँ को दोषी माना है। इन वर्षों में बच्चे में आदान–प्रदान और सहयोग की भावना के विकास की आवश्यकता होती है।

फ्रायड की तरह ही एडलर भी बच्चे के चरित्र विकास में पूरे परिवार की भूमिका को महत्त्व देते हैं। बच्चे का जीवन के प्रति अभिवृत्ति को फ्रायड ने जीवन शैली (Style of life) कहा। उनके अनुसार प्रारम्भिक वर्षों में सन्तुष्ट बच्चा हमेशा हुक्म देना पसन्द करता है। वह अपना काम दूसरों से करना चाहता है। इसी प्रकार तिरस्कृत बच्चा सबसे अलग रहने की आदत बना लेता है। वह असुरक्षित बन जाता है और चिन्ता करने लगता है। इस प्रकार दोनों ही बच्चों में सहयोग की भावना नहीं रहती है।

---

1 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा' : रामदरश मिश्र, पृष्ठ – 82

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

एडलर ने काम–आवेग को फ्रायड के समान महत्वपूर्ण नहीं माना। उनके अनुसार जीवन की प्रारम्भिक समस्याएँ लैंगिक नहीं होती और जब तक ये समस्याएँ सामने आती हैं, उस समय तक जीवन शैली बन चुकी होती है। लैंगिक जीवन को सम्पूर्ण जीवन शैली में स्थान बनाना पड़ता है। जिसका प्रमुख लक्ष्य या तो व्यक्तिगत उत्कर्ष होता है या समाजगत उत्कर्ष। मनोविश्लेषण द्वारा सब कुछ काम पर केन्द्रित करने पर वह वैयक्तिक क्रियाओं का विकृत रूप प्रस्तुत करता है। इस बात की दृष्टि के लिए एडलर उदाहरण देते हैं कि जो पुरूष नपुंसक होता है और जिसमें सामाजिक भावना कम होती है, अपनी स्त्री पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए वह अपने अचेतन में युक्ति सोचता है। एडलर ने जीवन की तीन विशिष्ट समस्याओं का वर्णन किया है। पहली समस्या जातीय जीवन की है, दूसरी औद्योगिक जीवन और तीसरी समस्या लैंगिक वासना की है। बच्चा सर्वप्रथम सामाजिक समायोजन से एक प्रतिमान (Pattern) तैयार करता है। इसके पश्चात् वह जीवन की अन्य समस्याओं का सामना करता है। यदि बालक की सामाजिक अभिवृत्ति साहस और सहकारिता की होती है तो वह अपनी जीवन शैली में काम रूचि लेकर विवाह और प्रेम में सफलता प्राप्त करता है किन्तु यदि बच्चे की कामवृत्ति ऐसी बन जाती है कि वह अपने साथियों से आगे बढ़ना चाहता है, तो बाद में वह कामुकता को साधन बनाकर उसी लक्ष्य को पाने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार एडलर के वैयक्तिक सिद्धान्त में दैनिक जीवन के व्यवहार में आने वाला यथार्थ पाया जाता है। इसलिए उनका व्यक्तित्त्व मनोविज्ञान और जीवनशैली का प्रत्यय चरित्र तथा व्यक्तित्त्व मनोविज्ञान के लिए आज भी महत्त्वपूर्ण देन है।"[1]

कार्ल गस्टैव युंग (Carl Gustav Jung) : प्रारम्भ में युंग फ्रायड के घनिष्ठ सहयोगी थे। लेकिन बाद में मदभेद होने के कारण उन्होंने वैश्लेषिक मनोविज्ञान नामक नवीन सिद्धान्त की स्थापना की। युंग ने अपने 'The

1 'Contomparary School of Psychology' : R.S. Woodwarth, Page - 197

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

Psychology of Unconscious' में काम–वासना सम्बन्धी विचार प्रकट किए। काम–वासना को उन्होंने अभेद मानसिक शक्ति की समग्रता बताकर उसे सामान्य जीवन की अंतःप्रेरक (Urge) माना।

मानसिक व्यवहार के सम्बन्ध में युंग का विचार फ्रायड और एडलर के विचारों से भिन्न है। उनके अनुसार यह न तो फ्रायड के काम–वासना से प्रभावित होता है और न ही एडलर की उत्कृष्ट चालना से। युंग केवल इसे एक अभेद्य जीवन शक्ति मानते हैं। जिसकी अभिव्यक्ति लैंगिक सुख का अनुसरण करने, उत्कर्ष की खोज करने, कलात्मक सर्जन आदि अनेक क्रियाओं में होती है, कामवासना अथवा मानसिक शक्ति का प्रयोग मूलतः आत्म परीक्षण (Self preservation) तथा जाति के लिए होता है। जब इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है तब वह शक्ति अन्य क्रियाओं के लिए प्राप्त होती है। युंग मन को तीन भागों में विभाजित करते हैं– चेतनात्मक, वैयक्तिक अचेतनात्मक और सामूहिक अचेतनात्मक। चेतनात्मक और अचेतनात्मक भाग एक–दूसरे के विपरीत होते हैं और ये पारस्परिक सापेक्षता से एक–दूसरे को सन्तुलित करते हैं। यदि इन भागों में तनाव आ जाता है तो मानसिक शक्ति उन्मुक्त हो जाती है। अचेतन मन की अपेक्षा चेतन मन का कार्य गौंण है। एक वातावरण में समायोजन लाने के लिए चेतना उपयोगी है।

फ्रायड जहाँ स्वप्नों को दमित इच्छा के द्योतक बताते हैं, वहीं एडलर के अनुसार स्वप्न हमारे भविष्य के कार्यों की पूर्व सूचना देते हैं, लेकिन युंग दोनों के कथनों को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि स्वप्न आने वाली घटनाओं का पूर्व ज्ञान करके भविष्यवाणी करते हैं।

युंग ने मनुष्य के दो प्रकार के भेद किये– बहिर्मुखी (Extrovert) तथा अन्तर्मुखी (Introvert)। संसार के भौतिक तथा सामाजिक वातावरण में अभिरूचि रखने वाला मनुष्य बहिर्मुखी होता है और जिनकी रूचि स्वयं अपनी ओर केन्द्रित रहती है और सामयिकता में कमी होती है वह अन्तर्मुखी प्रवृत्ति का होता है।

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

बहिर्मुखी व्यक्ति में लिबिडो बाहर की ओर उत्क्रमित होता है, लेकिन अन्तर्मुखी व्यक्ति अन्दर की ओर उत्क्रमण करता है। बहिर्मुखी और अन्तर्मुखी दोनों वर्गों को मन की चार क्रियाओं विचार (Thinking), भाव (Feeling), संवेदन (Sensation), अन्तर्दशन (Intuition) के आधार पर युंग ने चार–चार उपवर्गों में बाँटा है–

बहिर्मुखी	**अन्तर्मुखी**
1. बहिर्मुखी विचारक	1. अन्तर्मुखी विचारक
2. बहिर्मुखी भावना	2. अन्तर्मुखी भावना
3. बहिर्मुखी संवेदक	3. अन्तर्मुखी संवेदक
4. बहिर्मुखी अन्तर्ज्ञान	4. अन्तर्मुखी अन्तर्ज्ञान

'Psychiatry for every man' के अनुसार इन आठ प्रकार के व्यक्तियों के गुणों का विश्लेष्ण इस प्रकार है–

बहिर्मुखी विचारक ठोस वास्तविक घटनाओं के आधार पर अपने सिद्धान्तों की स्थापना करता है, वह संवेदी अनुभवों को तार्किक विश्लेषण का आधार मानता है। बहिर्मुखी भावना वाला मनुष्य दूसरों के साथ मित्रता कर बाह्य वस्तु के लिए भावना द्वारा प्रभावित रहता है, बहिर्मुखी संवेदना वाला यथार्थवादी तथा भौतिक वस्तुओं में इच्छा रखने वाला होता है। वह किसी वस्तु की संवेदी आकृतियों से प्रभावित रहता है। बहिर्मुखी अन्तर्ज्ञान वाला भाग्य पर अधिक भरोसा रखता है। वह अपनी प्रवृत्तियों को कितना ही कोशिश करे छोड़ नहीं सकता है। अन्तर्मुखी विचार वाला व्यक्ति प्रत्यात्मक (Ideational) प्रतिकृतियों से प्रभावित रहता है वह वास्तविकता से अधिक विचार जगत में रूचि रखता है।

अन्तर्मुखी भावना वाला व्यक्ति अपनी भावना और संवेगों के मानसिक जगत में विचरण करता है। वह असामाजिक होता है और मौन रहता है। अपने आप को व्यक्त करने में वह असुविधा का अनुभव करता हैं। अन्तर्मुखी संवेदना

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

वाला व्यक्ति वाह्य जगत को ध्यान में रखता है, लेकिन वह प्रत्यक्ष आत्मनिष्ठ आन्तरिक अवस्था द्वारा प्रभावित रहता है। वह भावुक होता है और लोगों की बातों से अधिक वह अपना ध्यान स्वयं में लगाता है।"[1]

इस प्रकार युंग ने रहस्य विद्या (Mysticism) तथा अविवेकी (Irrational) विचार के सम्बन्ध में अध्ययन किया। उन्होंने बिना किसी आलोचना की परवाह किए अपनी खोजों को उत्साहपूर्वक स्वीकार किया।

फ्रायड, एडलर व युंग के मनोविश्लेषण सम्बन्धी सिद्धान्तों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि तीनों ही मनोविश्लेषणशास्त्रियों ने अपने–अपने सिद्धान्तों को अलग–अलग नाम दिये हैं, लेकिन सभी ने अवचेतन को ही महत्त्वपूर्ण और मूल प्रेरक के रूप में माना। तीनों मनोविश्लेषणशास्त्रियों का लक्ष्य अवचेतना की अन्ध शक्तियों में सन्तुलन पैदा करना है। अवचेतन की दमित वासनाएँ मानव जीवन के प्रत्येक कार्य को प्रभावित करती हैं। बचपन में ही बालक की विभिन्न समस्याओं, मनःस्थितियों एवं आवश्यकताओं को नहीं समझने के कारण उसके अन्दर अनेक प्रकार की ग्रन्थियाँ बन जाती हैं, जो अवचेतन में चली जाती हैं और जीवन में उसके सारे कार्यों को प्रभावित करती हैं। इन मनोविश्लेषणशास्त्रियों ने इन्हीं अवचेतन में छिपी विभिन्न ग्रन्थियों को उद्‌घाटित करने का कार्य किया है।

हिन्दी उपन्यासों पर प्रभाव : मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्तों ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को बहुत अधिक प्रभावित किया। इन सिद्धान्तों के प्रभाव से उपन्यास साहित्य में काल्पनिक चरित्रों के स्थान पर वास्तविक व यथार्थ चरित्रों की स्थापना होने लगी और उन चरित्रों का मनोविश्लेषण कर उनकी नंगी वास्तविकता को प्रदर्शित किया जाने लगा। मनोविश्लेषणवादियों ने यह सिद्ध किया कि मानव चरित्र का निर्माण चेतन से न होकर अचेतन से हुआ है और उसी से वह संचालित होता है। यह अचेतन भाग ही समस्त कार्यों का प्रेरक

1 'Psychiatry for Everyman' : J.A.C. Brown, Page – 86-97

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

होता है। इसमें स्थित दमित वासनाएँ मानव जीवन को प्रभावित करती हैं। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों ने मानव के वाह्य रूप व कार्य व्यापारों को महत्त्व न देकर उसके मन की आन्तरिक स्थितियों का विवेचन किया है।

चरित्र निर्माण के सम्बन्ध में भी मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में महत्त्वपूर्ण बदलाव आया। उपन्यासकार व्यक्ति की आन्तरिक जीवन के समस्त विविधताओं व जटिलताओं को व्यक्त करने लगे। जिससे साहित्य में जीवनी प्रधान उपन्यासों का प्रारम्भ शुरू हो गया। इन उपन्यासों में व्यक्ति के जीवन की सभी घटनाएँ होती हैं। उसके दैनिक जीवन की छोटी–बड़ी सभी घटनाओं को इसमें स्थान दिया जाता है। उपन्यासकारों ने चरित्रों का मनोविश्लेषण प्रस्तुत करने के लिए उनके अचेतन मस्तिष्क की विभिन्न प्रवृत्तियों, यौन जनित कुण्ठाओं, दमित वासनाओं आदि को प्रकट कर उसके कारण व निवारण पर विशेष बल दिया है। इन उपन्यासों में व्यक्ति के जीवन में घटित होने वाली छोटी–बड़ी सभी घटनाओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। "यथार्थवादी स्वरूप देने के लिए लेखक एक–एक क्षण का, एक–एक मनस्थिति का, एक–एक मुद्रा का उसी रूप में ईमानदारी से चित्र अंकित करता है जिस रूप में ये जीवन में घटित होती हैं।"[1]

हिन्दी उपन्यास साहित्य में मनोविज्ञान का प्रवेश : मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के अन्तर्गत उन्हीं उपन्यासों को रखा जाता है, जिनमें पात्रों का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया गया हो। इस सम्बन्ध में डॉ. रामदरश मिश्र लिखते हैं "मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहने का तात्पर्य उन उपन्यासों से है जो मूलतः मनोविश्लेषण पर आधारित हैं।"[2] मनोविश्लेषणवाद अपने सीमित अर्थ में आधुनिक चीज है मनोविश्लेषणवाद मस्तिष्क के चेतन, उपचेतन और अचेतन तीन विभाग कर अचेतन को विशेष महत्त्व प्रदान करता है।"[3] मनुष्य बाहर से जैसा दिखायी

---

1 'हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा' : डॉ. रामदरश मिश्र, पृष्ठ – 87–88

2 'हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा' : डॉ. रामदरश मिश्र, पृष्ठ – 80

3 'हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा' : डॉ. रामदरश मिश्र, पृष्ठ – 80

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

देता है, वैसा होता नहीं है इसीलिए मनुष्य को सम्पूर्णता से जानने के लिए उसके मन को समझना और जानना आवश्यक है। "किसी व्यक्ति को वास्तविक रूप से समझने के लिए हमें उसके मन के विभिन्न स्तरों को उद्घाटित करना पड़ेगा।"[1]

आधुनिक उपन्यास साहित्य काल्पनिक व यथार्थवादी प्रवृत्तियों को पार करता हुआ मनोविज्ञान की ओर अग्रसर है। "हिन्दी उपन्यास में मनोविज्ञान के प्रवेश के वस्तुतः दो सर्वप्रमुख कारण थे। प्रथमतः तो ऐतिहासिक विकास चक्र की दृष्टि से मनोविज्ञान का प्रवेश हिन्दी उपन्यास में अनिवार्य हो गया था और द्वितीयतः उपन्यासकार स्वयं इस हेतु सचेष्ट थे।"[2] हिन्दी उपन्यासों में यह मनोवैज्ञानिकता प्रेमचन्द युग की देन है। प्रेमचन्द से पूर्व हिन्दी उपन्यास में कल्पनाशीलता का बोलबाला था। प्रेमचन्द जी ने अपने कथा साहित्य में मनोविज्ञान को प्रश्रय दिया। हिन्दी उपन्यासों में यह मनोवैज्ञानिकता प्रेमचन्द युग की देन है। प्रेमचन्द से पूर्व हिन्दी उपन्यास में कल्पनाशीलता का बोलबाला था। प्रेमचन्द जी ने अपने कथा साहित्य में मनोविज्ञान को प्रश्रय दिया। "प्रेमचन्द से पूर्व उपन्यासकारों ने वाह्य क्रिया–कलापों एवं घटना व्यापारों को ही प्रधानता दी थी। प्रेमचन्द ने मनुष्य के वाह्य आचरणों के साथ–साथ उसके विचारों एवं अनुभूतियों का अंकन भी प्रारम्भ किया।"[3] डॉ. देवराज उपाध्याय ने लिखा है– "प्रेमचन्द जी तो हिन्दी में आधुनिक मनोवैज्ञानिक कथा साहित्य के प्रवर्तक हैं ही।"[4] उन्होंने ही सर्वप्रथम यथार्थवादी चरित्र प्रधान उपन्यासों की रचना की। प्रेमचन्द से पूर्व चरित्रों के वाह्य चित्रण की ही प्रधानता थी, लेकिन प्रेमचन्द और उनके समकालीन उपन्यासकार इस बात को जान चुके थे कि चरित्रों का वाह्य चित्रण अब पर्याप्त नहीं रह गया है। इसलिए उन्होंने आन्तरिक विश्लेषण को भी

---

1 'हिन्दी उपन्यास' : शिवनारायण श्रीवास्तव, पृष्ठ – 279

2 'अज्ञेय का कथा साहित्य' : ओम प्रभाकर, पृष्ठ – 21

3 'हिन्दी उपन्यास' : शिवनारायण श्रीवास्तव, पृष्ठ – 277

4 'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, आमुख पृष्ठ – 1

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

अपने उपन्यासों में स्थान दिया। प्रेमचन्द के अनुसार सबसे उत्तम कहानी वह होती है जिसका आधार कोई मनोवैज्ञानिक सत्य है।"[1] प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में पात्रों के चरित्र–चित्रण पर अधिक बल दिया। डॉ. त्रिभुवन सिंह ने लिखा है– "यदि मनोविज्ञान के सामान्य अर्थ को लें तो इसका प्रयोग हमें पात्रों के चरित्र निर्माण में प्रेमचन्द के उपन्यासों से ही मिलने लग जाता है। प्रेमचन्द जी ने पात्रों का निर्माण अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंग से किया।"[2]

मानव चरित्र के उद्‌घाटन के लिए उसके जीवन के विभिन्न प्रवृत्तियों, घटना और रहस्यों को प्रकट करना आवश्यक है इसलिए मानव चरित्रों के उद्‌घाटन करने के कारण प्रेमचन्द के उपन्यासों का लक्ष्य मानव जीवन के विभिन्न रहस्यों को चित्रित करना हो गया। फलस्वरूप उपन्यासों में मनोवैज्ञानिकता का आना स्वाभाविक हो गया। "प्रेमचन्द के हिन्दी साहित्य में पदार्पण करने के साथ ही उपन्यासों में जीवन, उसकी जटिलताओं, वैषम्य तथा संघर्ष को समाविष्ट किया और चुँकि इन सारी क्रियाओं के साथ मानव मन और हृदय का सम्बन्ध है, प्रकारान्तर में उसमें मनोवैज्ञानिकता का आना अनिवार्य हो गया।"[3] हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रेमचन्द के 1916 में प्रकाशित उपन्यास 'सेवासदन' से मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की शुरूआत होती है। 'सेवासदन' में प्रेमचन्द ने मानव मन की विभिन्न प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन किया है। "मानव मन की अस्थिरता का, उसके रेशनलाइजेशन (Rationalisation) करने की प्रवृत्ति का, संसूचना (Suggestion) के द्वारा प्रभावित करने वाली मनोवृत्ति का अच्छा उदाहरण 'सेवासदन' में मिलता है।"[4] इसके अतिरिक्त प्रेमचन्द के अन्य उपन्यासों 'रंगभूमि', 'गबन', 'गोदान', 'प्रेमाश्रय', 'कायाकल्प' में भी मनोविज्ञान के दर्शन होते हैं।

---

1 'कुछ विचार' : प्रेमचन्द, पृष्ठ – 32

2 'हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद' : डॉ. त्रिभुवन सिंह, पृष्ठ –

3 'हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 150

4 'हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 150

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

यद्यपि हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का प्रारम्भ प्रेमचन्द के उपन्यासों से ही हो गया था, लेकिन मनोविज्ञान का सूक्ष्म व व सही अर्थ में प्रयोग जैनेन्द्र के उपन्यासों से ही हुआ। "हिन्दी में सर्वप्रथम जैनेन्द्र ने व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व को अपने उपन्यास का मूलाधार बनाया और व्यक्ति के अन्तर्मन को विक्षुब्ध करने वाली भावनाओं का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंकन किया।"[1] जैनेन्द्र के पश्चात् इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय, डॉ. देवराज उपाध्याय, भगवती प्रसाद वाजपेयी, प्रभाकर माचवे, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, भारत–भूषण अग्रवाल आदि अनेक लेखकों ने मनोवैज्ञानिक उपन्यास लेखक के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

जैनेन्द्र के सभी उपन्यासों के पात्रों में दमन और कुण्ठा की मनोविकृति पायी जाती हैं। इनके चरित्र यौन–कुण्ठाओं से ग्रसित हैं, जिनका उद्घाटन जैनेन्द्र ने किया है। "'परख' में बुद्धि और अंतस का संघर्ष चित्रित किया गया है। 'सुनीता' में हरि तथा सुनीता की यौन–कुण्ठाओं को एक दार्शनिक आवरण देकर 'स्व' और 'पर' के अभेद निरूपण का प्रयत्न किया गया। 'त्यागपत्र' में विषम सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार आचरण करते हुए भी चेतना के प्रदीप्त प्रकाश में व्यक्ति की महत्ता प्रतिपादित की गई। 'सुखदा', 'विवर्त' और 'व्यतीत' में एक सीमा तक कुण्ठाओं से उत्पन्न वैचारिक एवं आंचलिक असंगतियों का वर्णन है।"[2] इनके सभी उपन्यासों में प्रेम का त्रिकोणत्त्व पाया जाता है। इनमें पात्रों की सख्या भी सीमित है। "पात्रों की संख्या कम होने का कारण यह है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार होने के कारण जैनेन्द्र की दृष्टि व्यक्तियों की मानसिक क्रिया–प्रतिक्रियाओं के चित्रण पर है, उस समाज पर नहीं, जिसमें वे रहते हैं।"[3] इनके पात्र असाधारण मनोविज्ञान से सम्बन्धित हैं। "जैनेन्द्र के पात्रों की असाधारणता का मुख्य कारण भीतर और बाहर का द्वन्द्व तथा भीतर और

---

1 'हिन्दी उपन्यास' : शिवनारायण श्रीवास्तव, पृष्ठ – 278

2 'हिन्दी उपन्यास': शिवनारायण श्रीवास्तव, पृष्ठ – 279

3 'हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष' : प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यास : डॉ. हरदयाल, पृष्ठ – 55

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

बाहर की द्वन्द्वहीनता एवं एकात्मिकता की खोज है।"[1] पात्रों के मनोविश्लेषण में जैनेन्द्र ने सहजता और सजगता का परिचय दिया है। "जैनेन्द्र बड़े ही सजग एवं सतर्क कलाकार हैं और उन्होंने अपने पात्रों का मनोविश्लेषण इतने सहज, समवेद्य एवं हार्दिक ढंग से किया है कि वह आरोपित सा नहीं लगता उनमें केवल वैज्ञानिक विश्लेषण ही नहीं है आध्यात्मिक अन्वेषण भी है।"[2]

जैनेन्द्र के पश्चात् इलाचन्द्र जोशी ऐसे उपन्यासकार हैं जिन्होंने अपने उपन्यासों में मनोविज्ञान का प्रयोग सैद्धान्तिक स्तर पर किया है। "उन्होंने आग्रहपूर्वक मनोविज्ञान को अपने उपन्यासों में स्थान दिया है, जानबूझ कर उसे अपनी रचनाओं का उपजीव्य बनाया है।"[3] उन्होंने अपने उपन्यासों में मानव मन की विभिन्न मूलगत प्रवृत्तियों को अंकन किया। उनके पात्र काम–वासनाओं के दमन व यौन–जड़ित कुण्ठाओं के कारण अर्द्धविक्षिप्त से लगते हैं। इनके सभी उपन्यासों में फ्रायड की मनोविश्लेषण शैली के दर्शन होते हैं। जोशी जी का प्रथम उपन्यास 'लज्जा' जो सन् 1929 में प्रकाशित हुआ, में जोशी जी ने काम–ग्रन्थि से पीड़ित लज्जा नामक युवती का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया है। 'संन्यासी' व 'निर्वासित' में सभी पात्रों के मानसिक ऊहापाहों व मनोवृत्तियों को उजागर किया गया हैं 'पर्दे की रानी' में पूर्व अर्जित संस्कारों द्वारा मानव के क्रिया–कलापों में पड़ने वाले प्रभाव को प्रदर्शित किया है। 'प्रेत और छाया' में यौन समस्याओं से ग्रसित पारसनाथ का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार जोशी जी ने 'मुक्तिपथ', 'सुबह के भूले' व 'जिप्सी' में मनोवैज्ञानिक आधार पर पात्रों के व्यक्तित्त्व के विकास को दिखाया है। 'जहाज का पंछी' में जोशी जी ने यथार्थपरक मनोविश्लेषणात्मक शैली अपनायी। इसमें उन्होंने एक शिक्षित नवयुवक जो समाज में पग–पग प्रताड़ित होता है और विभिन्न प्रकार के कार्य करने के लिए विवश होता है, का अंकन किया है। इसमें विभिन्न युगीन

---

1 'हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष' : प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यास : डॉ. हरदयाल, पृष्ठ – 55

2 'हिन्दी उपन्यास': शिवनारायण श्रीवास्तव, पृष्ठ – 279

3 'हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ – 307

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

विकृतियों के दर्शन होते हैं। 'भूत का भविष्य' में जोशी जी ने समाज की प्रताड़ना से पीड़ित एक हरिजन युवक का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया है।

भगवती चरण वर्मा की रचनाओं में मनोविज्ञान का प्रयोग एक समन्वित रूप में हुआ है। 'चित्रलेखा' में परिस्थितियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण, 'तीन वर्ष' में रमेश के दमित इच्छाओं, कुण्ठाओं, असफलताओं आदि का मनोवैज्ञानिक अंकन किया है। इन्होंने चरित्रों के स्पष्टीकरण व परिस्थितियों के वर्णन के लिए मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है।

हिन्दी उपन्यासों में मनोविज्ञान को प्रश्रय देने वालों में अज्ञेय का भी प्रमुख स्थान है। 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप' और 'अपने–अपने अजनबी' में अज्ञेय ने अपनी मनोवैज्ञानिक मान्यताओं का निरूपण किया है। 'शेखर एक जीवनी' के सम्बन्ध में डॉ. हरदयाल लिखते हैं– "'शेखर एक जीवनी' आसन्न मृत्यु की छाया में प्रत्यावलोक के रूप में लिखा गया है। इस उपन्यास में इस प्रकार के अनेक स्थल हैं जो अस्वाभाविक लगते हैं, किन्तु इसमें इन्कार नहीं किया जा सकता कि 'शेखर एक जीवनी' हिन्दी का पहला उपन्यास है जिसमें बड़ी गहराई और सूक्ष्मता के साथ एक व्यक्ति के विकास का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।"[1] अज्ञेय का 'शेखर एक जीवनी' हिन्दी का प्रथम उपन्यास है जिसमें शिशु मानव के सपनों को फ्रायड के शब्दों में (Pleasure Principle) आनंद–प्रधान जीवन की झाँकियों को, उसके कौतुहल और जिज्ञासाओं को तथा उसकी स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर समाज तथा माता–पिता के व्यवहार अथवा यौं कहिए कि (Reality Principle) के सम्पर्क से उत्पन्न दमन को, मानसिक ग्रन्थियों को तथा उसके जीवन व्यापी प्रभाव को कथा–क्षेत्र में लाने का प्रयत्न किया गया है।"[2] अज्ञेय ने अपने तीनों उपन्यासों में पात्रों के अन्तर्सत्यों का यथार्थ विश्लेषण करने के लिए मनोविज्ञान प्रस्तुत किया है।

---

1 'हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष' : प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यास : डॉ. हरदयाल, पृष्ठ –62

2 'आधुनिक कथा साहित्य और मनोविज्ञान' : डॉ. देवराज उपाध्याय, पृष्ठ–245

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

"लेखक ने पात्रों के अन्तर्सत्यों का यथार्थ विश्लेषण करने के लिए मनोविज्ञान की दृष्टि को स्वीकारा है, जीवन की अनुभूतियाँ जीवन से ही जी गई हैं, मनोविज्ञान की पोथियों से नहीं।"[1]

'पथ की खोज', 'बाहर–भीतर', 'रोड़े और पत्थर', 'दोहरी आग की लपट', 'पतझर' एवं 'अजय की डायरी' डॉ. देवराज उपाध्याय के प्रमुख मनोवैज्ञानिक उपन्यास हैं। 'पथ की खोज' में नायक चन्द्रनाथ और उसक पत्नी सुशीला की एक सखी साधना के एकान्तिक प्रेम का मनोवैज्ञानिक चित्रण है।"[2] इनके दूसरे उपन्यास में देवर, भाभी व पति के वैयक्तिक धारणाओं का मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया गया हे। 'अजय की डायरी' में कॉलेज के एक प्राध्यापक और उसकी छात्रा के असफल प्रेम का वर्णन है।

उपरोक्त उपन्यासकारों के अतिरिक्त भी हिन्दी साहित्य में अनेक उपन्यासकारों ने मनोवैज्ञानिक मान्यताओं को अपने उपन्यासों में स्थान दिया। प्रभाकर माचवे ने अपने 'द्वाभा' व 'सांचा' उपन्यासों में मनोविश्लेषण को प्रश्रय दिया है। "'द्वाभा' उपन्यास में नारी की समाज विमुख चेतना का चित्रण है, जो चेतना उसे समस्त पुरूष समाज को उसके शरीर को झंझोड़ने वाले दानव के रूप में दिखाती है।"[3] अन्य मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में धर्मवीर भारती का 'गुनाहों का देवता' व 'सूरज का सातवाँ घोड़ा', नरेश मेहता के 'डूबते मस्तूल', 'यह पथ बन्धु था', 'धूमकेतु : एक श्रृति', गिरिधर गोपाल के 'चाँदनी के खण्डहर', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के 'सोया हुआ जल' राजेन्द्र यादव के 'कुलटा' और 'अनदेखे अनजान पुल', लक्ष्मीकान्त वर्मा का 'खाली कुर्सी की आत्मा', 'एक कटी हुई जिन्दगी एक फटा हुआ कागज', मोहन राकेश का 'अन्धेरे बन्द कमरे', निर्मल वर्मा के 'वे दिन', उषा प्रियंवदा के 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' तथा 'रूकोगी नहीं राधिका', रमेश बख्शी का 'वैसाखियो वाली इमारत', भारत भूषण अग्रवाल का

1 'हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा' : डॉ. रामदरश मिश्र, पृष्ठ– 108

2 'आधुनिक हिन्दी साहित्य' : डॉ. रामगोपाल सिंह चौहान, पृष्ठ– 248

3 'आधुनिक हिन्दी साहित्य' : डॉ. रामगोपाल सिंह चौहान, पृष्ठ– 250

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/

'लौटती लहरों की बांसुरी', सूर्य कुमार जोशी का 'दिगम्बरी', कमलेश्वर का 'डाक बंगला', राजकमल चौधरी का 'मछली मरी हुई', 'देहगाथा', 'शहर नहीं था', रांगेय राघव का 'पतझर' आदि हैं।

आधुनिक युग में हिन्दी उपन्यास अपनी विशिष्ट पहचान बना चुके हैं। इन उपन्यासों में व्यक्ति के वाह्य क्रिया–कलापों को महत्त्व न देकर उनके आन्तरिक विश्लेषण पर अधिक ध्यान दिया गया है। आज का युवा वर्ग बचपन की अनेक प्रकार की कुण्ठाओं, विकृतियों आदि के कारण असामान्य हो चला है। परिणामस्वरूप उसके अन्दर अनेक प्रकार की मनोग्रन्थियाँ उत्पन्न हो रही हैं। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में इन्हीं मनोग्रन्थियों के विश्लेषण पर अधिक ध्यान दिया गया है।

Estelar

Created with Print2PDF. To remove this line, buy a license at: http://www.software602.com/